P: ISSN NO.: 2394-0344 RNI No.UPBIL/2016/67980 VOL-2* ISSUE-11* February- 2018
E: ISSN NO.: 2455-0817 Remarking An Analisation

1857 ईस्वी के स्वतंत्रता संग्राम में राजस्थान की भूमिका: एक अध्ययन

सारांश

वास्तव में 1857 के विद्रोह ने राजस्थान राज्यों के शासकों में एक अंतर्विरोध उत्पन्न कर दिया था तथा उन्हें मध्यस्थ की भूमिका अपनाने के लिए विवश किया था। उन्होंने परम्परागत कूटनीति के अनुसार ब्रिटिश सत्ता के साथ सतही संबंध बनाये रखे, यद्यपि वास्तविक रूप में उनकी सहानुभूति विद्रोही मुगल बादशाह बहादुरशाह एवं उसके सहयोगियों के साथ रही। इसी कारण दिल्ली में ब्रिटिश सरकार द्वारा विद्रोह का दमन करने के बाद भी कोटा, जयपुर, बँदी, अलवर आदि राज्यों की सीमाओं में विद्रोही आश्रय पा सके तथा उनके साथ ब्रिटिश सरकार की तरह शासकों ने अमानवीय व्यवहार नहीं किया। ब्रिटिश सरकार ने राजस्थान राज्यों के शासकों के प्रति सदाषयता तथा मैत्रीभाव दिखाते हुए उनकी स्वामिभक्ति की प्रशंसा की तथा कुछ शासकों के वार्षिक करों के ऋणों को माफ कर दिया और भेंट उपहार प्रदान किये। इसके साथ ही कुछ शासकों की तोपों की सलामी में वृद्धि की, भूमि, खिलअत और गोद आदि की सनद प्रदान कर उन्हें सम्मानित किया तथा उनका पुनः विश्वास प्राप्त किया। विद्रोह के समय राजस्थान राज्यों के सैनिक व्यय में वुद्धि हुई तथा खाद्य पदार्थो की कीमतें बढ़ गई। अस्तु विद्रोही अपने उद्देश्यों में सफल हुए।

इस विद्रोह के परिणामस्वरूप ईस्ट इंडिया कम्पनी को, जिसने भारतीयों के सामाजिक विषयों में हस्तक्षेप किया था और आर्थिक कठिनाईयों में वृद्धि की थी, नवम्बर 1858 में इंग्लैण्ड की महारानी ने समाप्त कर दिया। भारतीयों को विश्वास दिलाया गया कि ब्रिटिश सरकार उनके सामाजिक और धार्मिक विषयों में हस्तक्षेप नहीं करेगी। इस आश्वासन के पश्चात् भी ब्रिटिश सरकार ने राजस्थान में अपनी सैनिक शक्ति को बनाये रखने के लिए अनेक जागीरदारों के किलों को ध्वंस कर दिया। 1857 के विद्रोह के दमन ने ब्रिटिश सरकार और जनसाधारण के बीच कड़वाहट छोड़ी, जो राजनैतिक जागृति का मुख्य आधार सिद्ध हुई।

शिवचरण चेड़वाल
व्याख्याता,
इतिहास विभाग,
बाबू शोभाराम राजकीय कला महाविद्यालय,
अलवर ,राजस्थान

मुख्य शब्द : सन् 1857 का स्वतंत्रता आंदोलन, राजस्थान, राजा, जागीरदार, प्रजा, ईस्ट इण्डिया कम्पनी, ब्रिटिश सरकार।

प्रस्तावना

1857 के संग्राम के समय राजस्थान के क्षेत्र में 18 राज्य थे और उनके मध्य में ब्रिटिश शासित अजमेर–मेरवाड़ा का प्रदेश था। इन राज्यों में से 15 राज्यों पर राजपूत वंश, दो राज्यों पर जाट वंश तथा अन्य एक राज्य पर नवाब अमीर खां के वंशजों का शासन था। इस स्वतंत्रता संग्राम में भारत के अन्य क्षेत्रों के समान ही, राजस्थान के सभी वर्गों ने भाग लिया। इंग्लैण्ड की संसद में विपक्ष के नेता बैंजामिन डिज़रायली को 1857 के सैनिक विद्रोह में ब्रिटिश सत्ता को समाप्त करने वाले राष्ट्रव्यापी विद्रोह की ध्वनि सुनाई दी। भारत के इस स्वातन्त्र्य युद्ध ने कालान्तर में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस, क्रान्तिकारियों तथा समाज के अन्य वर्गों को भारतीय सांस्कृतिक पुनर्जागरण तथा स्वतंत्रता आन्दोलन में सक्रिय भाग लेने की प्रेरणा दी।

मुगल बादशाह बहादुरशाह द्वितीय ने मेरठ तथा दिल्ली के भारतीय सिपाहियों के विद्रोह का नेतृत्व 11 मई, 1857 को स्वीकार करके इस सैनिक विद्रोह को ब्रिटिश सत्ता की प्रभुता को समाप्त करने वाले राष्ट्रीय स्वातन्त्र्य युद्ध में परिणित कर दिया। इसके परिणामस्वरूप स्वतंत्रता संग्राम ने मुगल साम्राज्य की राजधानी दिल्ली को राष्ट्रीय विद्रोह के मुख्य केन्द्र में परिवर्तित कर दिया। जहाँ भारत के सभी क्षेत्रों से ब्रिटिश रेजीमेन्ट के भारतीय विद्रोही सिपाही, शहजादे, जमींदार, वहाबी, बुद्धिजीवी और सामान्यजन व्यक्तिगत स्तर पर मुगल

सम्राट के नेतृत्व में ब्रिटिश सत्ता की जड़ों को उन्मूलित करने के लिए एकत्रित हुए। दूसरी ओर, थोड़े समय में ही यह विद्रोह भारत के अन्य क्षेत्रों जैसे–दिल्ली से स्यालकोट तक, उत्तर भारत, मध्य भारत तथा दक्षिण भारत में कोल्हापुर तक फैल गया। ग्वालियर, इन्दौर राजस्थान आदि देशी रियासतों में भी सभी वर्गों ने मुगल बादशाह के प्रति सहानुभूति और सहयोग प्रदर्षित किया और ब्रिटिश सत्ता के प्रति विद्रोह कर दिया।

इस विद्रोह की व्यापकता तथा लोकप्रियता का अनुमान इस बात से स्पष्ट होता है कि राजस्थान के राज्यों में समाज के प्रत्येक वर्ग ने इसमें भाग लिया। इसका राष्ट्रीय स्तर पर प्रभाव इस तथ्य से भी प्रमाणित होता है कि मुगल बादशाह बहादुरशाह, नाना साहब तांत्या टोपे, मंदसौर के शाहज़ादा मिर्जा मोहम्मद फ़िरोज शाह, अवध की बेगम हज़रतमहल तथा आज़मगढ़ और दीसा (गुजरात) के भारतीय विद्रोही सैनिकों द्वारा प्रसारित घोषणाओं में आर्थिक, सामाजिक और धार्मिक कारणों से अंग्रेजों के प्रति असंतोश की भावना व्यक्त की गई थी। इसी असंतोश के कारण राजस्थान और भारत के अन्य क्षेत्रों के हिन्दू तथा मुसलमान नागरिकों तथा सिपाहियों ने 1857 के विद्रोह में आत्म बलिदान करने के लिए सबका आह्वान किया था। इस प्रकार यह घोषणाएँ भारतीयों में व्याप्त राष्ट्रीय एकता की भावना को प्रदर्षित करती है। विद्रोहियों में विद्यमान राष्ट्रीय एकता की भावना जी.बी.मैलिसन के इस विवादास्पद प्रष्न को गौण बना देती है कि 1857 का विद्रोह सुनियोजित था या नहीं। यह कहना उचित होगा कि भारतीयों में ब्रिटिश सत्ता के प्रति व्याप्त असंतोश को मेरठ के सिपाहियों ने 10 मई 1857 के विद्रोह द्वारा प्रकट रूप दिया, तथा देशव्यापी राष्ट्रीयता की भावना ने उसे मुगल बादशाह बहादुरशाह द्वितीय के नेतृत्व में ब्रिटिश सत्ता को भारत में समाप्त करने के लिये राष्ट्रीय विद्रोह में परिवर्तित कर दिया।

अध्ययन का उद्देश्य

प्रस्तुत शोधपत्र का मुख्य उद्देश्य 1857 ईस्वी के स्वतंत्रता संग्राम में राजस्थान की भूमिका का अध्ययन करना है। किन्तु इसे राजस्थान के तत्कालीन सामाजिक, राजनीतिक, प्रशासनिक तथा सैनिक संदर्भ में भी देखने का प्रयास किया गया है अर्थात् तत्कालीन राजस्थानी समाज का समन्वित अध्ययन प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। साथ ही 1857 ईस्वी के स्वतंत्रता संग्राम में सम्पूर्ण भारत के योगदान के सन्दर्भ पर भी दृष्टिपात किया गया।

अतः प्रस्तुत शोधपत्र में सन् 1857 के स्वाधीनता संग्राम में राजस्थान के राजाओं, सामंतों, सैनिकों, साहित्यकारों तथा जनसामान्य की भूमिका का अध्ययन किया गया है। साथ ही सन् 1857 की क्रांति के राजस्थान में फैलने के कारणों, सफलता एवं असफलता का भी अध्ययन प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है।

शोध पद्धति

प्रस्तुत शोधपत्र हेतु शोधकर्ता की पद्धति ऐतिहासिक, व्याख्यात्मक और समालोचनात्मक रही है। ज्ञात तथ्यों तथा इस विषय पर उपलब्ध पूर्ववर्ती लेखकों के विचारों का विष्लेषण, स्पष्टीकरण, मूल्यांकन और आलोचनात्मक परीक्षण करते हुए प्राप्त परिणामों का सत्य की कसौटी पर परीक्षण करने का प्रयास किया गया है।

शोध अध्ययन में सबसे महत्वपूर्ण वस्तु प्रस्तुत अध्ययन की विषय एवं शोध सामग्री की होती है। इस विषय पर प्राथमिक सामग्री भारत के राष्ट्रीय अभिलेखागार एवं राजस्थान राज्य अभिलेखागार, बीकानेर तथा इतिहासकारों की विभिन्न रचनाओं में पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध है। इस विषय पर माध्यमिक सामग्री का अभाव होने के कारण प्रस्तुत शोधपत्र में प्राथमिक स्तर की शोध सामग्री का ही अधिक उपयोग किया गया है। इसके अलावा प्रस्तुत शोध सामग्री को विभिन्न स्रोतों से प्राप्त कर तथा शोधन कर ही प्रयोग में लाया गया है।

साहित्यावलोकन

सन् 1857 के स्वतंत्रता संग्राम में राजस्थान की भूमिका के सन्दर्भ में किये गये इस शोध के उद्देष्यों तथा शोध पद्धति का विवरण प्रस्तुत करते हुए इस विषय पर लिखे गये साहित्य का अवलोकन, विष्लेषण एवं मूल्यांकन किया गया है यथा–

कर्नल जेम्स टॉड द्वारा लिखित कृति ''एनाल्स एण्ड एन्टीक्यूटीज ऑफ राजस्थान'' (1920) में राजस्थान के इतिहास के बारे में विस्तृत व्याख्या करते हुए राजपूत राजवंशों के इतिहास पर विषेष प्रकाष डाला गया है। इसमें अंग्रेजों एवं राजवंशों के बीच चले संघर्ष की भी विस्तृत व्याख्या की गई है।

के.एस.सक्सेना ने अपनी पुस्तक ''राजस्थान में राजनैतिक जन–जागरण'' (2007) में लिखा है कि राजस्थान त्याग और बलिदान की भूमि रहा हैं और देश–भक्ति का अनूठा उदाहरण। भारत के स्वतंत्रता आंदोलन में राजस्थान की अहम भूमिका रही है अतः यह आवष्यक है कि स्वातंत्र्योत्तर पीढ़ी को यह भान रहे कि स्वाधीनता प्राप्त करने हेतु हमने कितने और कैसे त्याग व बलिदान दिये है।

बी.एल.पनगड़िया द्वारा लिखित कृति ''राजस्थान में स्वतंत्रता संग्राम''(2007) में राजस्थान के स्वतंत्रता–संग्राम से सम्बन्धित तथा राजस्थान की विभिन्न रियासतों में हुए आंदोलनों को लेखा–जोखा प्रस्तुत किया गया है तथा राजस्थान के स्वतंत्रता–संग्राम से सम्बन्धित कुछ महत्वपूर्ण सामग्री के साथ ही शहीदों की सूची व राजस्थान के स्वतंत्रता–संग्राम का एक कलेण्डर पुस्तक के परिषिष्ट के रूप में जोड़ा गया है।

बसंत जोषी ने अपनी रचना ''उन्नीसवीं सदी का राजस्थान'' (1997) में राजस्थान के इतिहास का उन्नीसवीं सदी के सन्दर्भ में अध्ययन प्रस्तुत किया है। इस पुस्तक मे राजस्थान के ब्रिटिश संरक्षण में आने के प्रमुख कारणों पर भी प्रकाष डाला गया है।

गोपीनाथ शर्मा ने अपनी रचना ''राजस्थान का इतिहास'' (2017) में लिखा है कि राजस्थान की प्राकृतिक स्थिति में विविधता होते हुए भी एकसूत्रता दिखाई देती है। पर्वत–श्रेणी का सिलसिला, नदियों का बहाव तथा मरूस्थल का फैलाव इसके एक कोने से दूसरे कोने तक प्रसारित होने से समूचे प्रदेश को एकसूत्र में बांधता है। प्राचीनकाल के राष्ट्रीय संगठन के तत्व तथा मध्यकालीन युग का स्वातन्त्रय–प्रेम राजस्थान के जनजीवन के मुख्य

अंग इसीलिए बन पाये कि यहाँ भाषा, धर्म, आचार–विचार के बंधन दृढ़ रहे और जनजीवन को संकीर्ण दृष्टि से ऊपर उठाने में सफल हुए।

बी.एम.दिवाकर द्वारा लिखित रचना ''राजस्थान का इतिहास'' (1987) में राजस्थान में राजपूतों की उत्पत्ति से लेकर राजस्थान की धार्मिक, सामाजिक एवं राजनीतिक स्थिति का अध्ययन किया गया है। राजपूतों एवं मराठों, राजपूत एवं अंग्रजों के सम्बन्धों की व्याख्या की गई हैं।

उपर्युक्त विवेचन द्वारा शोध विषय से सम्बन्धित साहित्य की समीक्षा करने का प्रयास किया गया है। समय तथा अन्य परिस्थितियों की सीमाओं में रहते हुए जो साहित्य सुलभ हो पाये, उन्हीं की यहाँ समीक्षा की गई है।

राजस्थान में 1857 ईस्वी की क्रांति

1818 ईस्वी तक राजस्थान के विभिन्न राज्यों ने अंग्रेजों से संधि कर ली थी किन्तु राजस्थान में अंग्रेजों के विरूद्ध असंतोश की भावनायें अत्यधिक व्याप्त थी। भरतपुर–दुर्ग का संघर्ष इस बात का स्पष्ट प्रमाण है। जोधपुर के महाराजा मानसिंह ने तो ब्रिटिश विरोधी ताकतों को बराबर सहायता दी। डॅंगरपुर के महारावल जसवंत सिंह को जब गद्दी से अलग किया गया तब उसका विरोध समस्त राजस्थान में हुआ। जयपुर में ब्लैक की हत्या, लुडलों पर घातक आक्रमण इस बात का स्पष्ट प्रमाण है कि आम जनता में ब्रिटिश–विरोधी भावना थी। यहाँ के शासक अधीनता स्वीकार करने के बाद भी अंग्रेजों द्वारा किये गये आंतरिक हस्तक्षेप से असंतुष्ट थे। जोधपुर लिजियन, शेखावटी ब्रिगेड की स्थापना इस बात का प्रमाण है कि ब्रिटिश विरोधी सामन्तों को नियंत्रण में रखने के लिए उनका निर्माण किया गया। इस प्रकार 1857 ईस्वी की क्रान्ति के प्रारंभ होने के समय राजस्थान में सभी ओर अंग्रेज–विरोध व्याप्त था। बांकीदास के लेखन से भी स्पष्ट है कि प्रबुद्ध वर्ग अंग्रेजी प्रभाव के विरूद्ध था। सूर्यमल्ल मिश्रण ने भी कई जागीरदारों को पत्र लिखकर अंग्रेज–भक्त शासक की निन्दा की थी।

सन् 1857 की क्रान्ति के कारण

कम्पनी से संधि के बाद राजस्थान में आंतरिक शांति स्थापित हुई, आर्थिक क्षेत्र में भी प्रगति हुई इसके बावजूद भी राजस्थान का विभिन्न वर्ग अंग्रेजों के विरूद्ध था। निःसंदेह विभिन्न संधियों से शांति तो अवश्य स्थापित हुई किन्तु स्वतंत्रता समाप्त हो गई। अतः प्रदेश के सभी वर्गो –शासक , सामन्त, सामान्य जनता में अंग्रेजों के प्रति विरोध की भावना पनपने लगी। जिसके निम्नलिखित कारण है यथा–

शासकों में असंतोश

कम्पनी से संधि का सीधा लाभ शासकों को प्राप्त हुआ। उन्हें मराठा, पिंडारी आदि की अराजकता से मुक्ति प्राप्त हुई तथापि अंग्रेजों के प्रति असंतोश की भावना उनमें कम नहीं थी। इस असंतोश का प्रमुख कारण संधि की शर्तो की मूल भावना के विपरीत आचरण है। संधि की शर्तो में शासकों की आंतरिक स्वतंत्रता का स्पष्ट प्रावधान था परंतु वास्तविक स्थिति इससे बिल्कुल भिन्न थी। करीब–करीब सभी राजस्थानी राज्यों में अंग्रेजी हस्तक्षेप दिन–प्रति दिन बढ़ता जा रहा था। मेवाड़ में कर्नल टॉड सर्वेसर्वा था। भरतपुर, डॅंगरपुर आदि राज्यों में उत्तराधिकार में अंग्रेजों की मनमानी रही। मारवाड़ के मानसिंह ने अंग्रेज विरोधी भावना स्पष्ट व्यक्त की। जयपुर में झूठाराम प्रसंग को लेकर तीव्र मतभेद थे। डलहौजी की गोद प्रथा अंग्रेज विरोधी भावना को बढ़ाने में सहायक सिद्ध हुई।

सामन्तों की मनोदशा

अंग्रेजों से संधि का सबसे महत्वपूर्ण प्रभाव सामन्तों की स्थिति पर पड़ा। संधि के पूर्व तक शासक को मुख्यतः सामन्तों पर ही निर्भर रहना पड़ता था। परन्तु संधि के पष्चात् सामन्तो पर शासकों की निर्भरता समाप्त प्रायः हो गई। अंग्रेज सामान्यतः शासक–सामन्त संघर्ष में शासकों का पक्ष लेते थे। परिणामस्वरूप सामन्तों की दशा ओर अधिक दयनीय हो गई थी। मारवाड़ के मानसिंह ने अपने सामन्तों के प्रति बहुत ही कठोर नीति अपनाई किन्तु निरंतर प्रयासों के उपरान्त भी उन्हें अंग्रेजी सत्ता से कोई सहायता नहीं मिली। तब लगभग सभी राज्यों में इसी प्रकार की दशा विद्यमान थी। सामन्त अपनी दुःखद स्थिति का उत्तरदायी मुख्यतः अंग्रेजों को ही मानते थे। अतः उनके प्रति भी सामन्तों का रोष कोई कम नहीं था। आउवा, सलूम्बर तो इसके प्रत्यक्ष उदाहरण है।

सामान्य जनता की भावना

आम जनता में भी अंग्रेज–विरोधी भावना व्याप्त थी। अंग्रेजों की ईसाई–धर्म प्रचार नीति, सामाजिक सुधार आदि को राजस्थान की साधारण जनता ने अपने धर्म व जीवन में अंग्रेजों के हस्तक्षेप की संज्ञा दी। नमक उत्पादन तथा अफीम की खेती संबंधी नियमों ने जनता में यह स्पष्ट भावना भर दी कि उनकी आर्थिक उन्नति में अंग्रेज बाधा उत्पन्न कर रहे है। अतः जनता में अंग्रेजों के प्रति अत्यधिक असंतोश था। इस असंतोश का व्यापक रूप क्रान्तिकारियों के प्रति जनता की भावना में देखा जा सकता है। डूँगजी और जवाहर जी द्वारा नसीराबाद की छावनी को लूटना आम जनता में बहुत ही प्रसन्नता का कारण बना। डूँगजी, जवाहरजी के कार्यो पर अनेक गीत रचे गये थे। अंग्रेज विराधी शासक व सामन्तों –जोधपुर के मानसिंह, सलूम्बर के केसरी सिंह की प्रशंसा में साहित्य का निर्माण हुआ।

इस प्रकार भारत व्यापी विद्रोही प्रारंभ होने के पूर्व सम्पूर्ण राजस्थान में ब्रिटिश विरोधी भावना व्याप्त थी और विद्रोह के समय राजस्थान भी पीछे नहीं रहा और यहाँ विद्रोह का शुभारंभ हो गया।

राजस्थान में सन 1857 के विद्रोह का प्रारंभ

1818 ईस्वी तक राजस्थान की सभी शक्तियों ने अंग्रेजो से संधि कर ली थी जिसके अनुरूप अंग्रेज सरकार ने सभी राज्यों में पॉलिटिकल ऐजेन्ट नियुक्त किये थे। जब विद्रोह शुरू हुआ तब मेवाड़, मारवाड़ एवं जयपुर में क्रमषः मेजर शावर्स, मेक मेसन, कर्नल ईडन पॉलिटिकल ऐजेन्ट थे। ये सभी जार्ज पैट्रिक लारेंस जो एजेन्ट टू दी गवर्नर जनरल के पद पर कार्यवाहक के रूप में कार्य कर रहा था, के अधीन थे। ए.जी.जी. अजमेर में रहता था। राजस्थान में तब निम्नांकित 6 ब्रिटिश छावनियाँ थी– नसीराबाद, देवली, ब्यावर, एरिनपुरा, नीमच और खैरवाड़ा। इन सैनिक छावनियों में पांच हजार भारतीय सैनिकों के

P: ISSN NO.: 2394-0344 RNI No.UPBIL/2016/67980 VOL-2* ISSUE-11* February- 2018
E: ISSN NO.: 2455-0817 Remarking An Analisation

अतिरिक्त कोई यूरोपीयन सैनिक नहीं थे, अतः ए.जी.जी. के लिए इन्हें नियंत्रण में रखना एक गंभीर चिन्ता का विषय था।

19 मई, 1857 ईस्वी को ए.जी.जी. लारेंस को माउन्ट आबू में मेरठ–विद्रोह की सूचना मिली। लारेंस ने तत्काल राजस्थानी शासकों के नाम अपने–अपने क्षेत्र में शांति बनाये रखते हुए विद्रोहियों को किसी भी प्रकार का सहयोग न करने संबंधी घोषणा–पत्र जारी किया। फिर भी उसके मन में चिंता तो थी ही। अंततः नसीराबाद से विद्रोह का आरंभ हो ही गया। यथा–

नसीराबाद

28 मई 1857 ईस्वी को नसीराबाद में सैनिकों ने विद्रोह कर दिया। इन भारतीय सैनिकों ने तोपखाने के सैनिकों को अपनी तरफ मिलाकर तोपों पर अधिकार कर लिया। विद्रोही सैनिकों ने छावनी को लूट लिया तथा अंग्रेज अधिकारियों के मकानों पर आक्रमण किये। छावनी को बर्बाद करके नसीराबाद के विद्रोही सीधे दिल्ली की ओर रवाना हुये। यह एक आश्चर्य है कि अजमेर इतना पास स्थित होते हुए भी सैनिकों ने अजमेर को अपने अधिकार में नहीं किया और यह इसलिए आश्चर्यजनक है कि उस समय अंग्रेजों द्वारा उसकी रक्षा का उपर्युक्त प्रबंध भी नहीं किया गया था। वाल्टर व हैथकोट ने मेवाड़ के सैनिकों की सहायता से इनका पीछा किया, परंतु उन्हें सफलता प्राप्त नहीं हुई। संभवतः इनका कारण यह था कि मेवाड़ व मारवाड़ के जागीरदारों ने नसीराबाद के विप्लवकारियों को अपने प्रदेश में से आसानी से गुजर जाने दिया। यह तथ्य इस बात का संकेत है कि मेवाड़ व मारवाड़ की सहानुभूति विप्लवकारियों के साथ थी।

नीमच

नसीराबाद–विद्रोह के समाचार जब नीमच पहुँचे तो कर्नल एबॉट ने भारतीय सैनिक अधिकारियों को अपने कर्तव्य के प्रति वफादार रहने की शपथ दिलवाई। साथ ही 2 जून 1857 ईस्वी को परेड़ लेते समय सभी सैनिकों से भी शपथ लेने के लिए कहा। तब एक सैनिक मोहम्मद अली बेग ने कर्नल एबॉट को चुनौती के साथ कहा कि अंग्रजों ने अवध के मामले में कहां तक शपथ का पालन किया? अतः हम भी इसके लिए बाध्य नहीं है। 3 जून को नसीराबाद से क्रान्ति की सूचना सैनिकों को मिल गई और रात्रि 11 बजे वहां भी विद्रोह प्रस्फुटित हो गया। क्रान्तिकारियों ने नीमच के एक सार्जेन्ट की पत्नी और बच्चों को मार दिया। इतना ही नहीं क्रान्तिकारियों ने भागते हुए अंग्रेज अधिकारियों का पीछा भी किया और डँगला पहुंचे, किन्तु कप्तान शावर्स बेदला के राव बख्तसिंह के नेतृत्व में मेवाड़ की एक सेना लेकर डँगला पहुँच गये। फलतः क्रांतिकारी वहां से भाग गये। तब डँगला में शरण लिये हुए अंग्रेज अधिकारियों को राव बख्तसिंह ने सुरक्षित रूप से उदयपुर पहुंचा दिया, जहाँ उन्हें जगमंदिर में रखा गया। महाराणा स्वरूपसिंह ने उनकी पूर्ण सुरक्षा ही नहीं की अपितु उनकी देखभाल हेतु विषेष सहायता भी दी। उधर विप्लवकारी भी दिल्ली की ओर रवाना हो गये। अगस्त व सितम्बर में क्रांति का वातावरण राजस्थान में अपनी चरम सीमा पर था। नसीराबाद व नीमच के विद्रोह ने स्थानीय जनता को भी प्रभावित किया। नीमच से पहुंचे क्रांतिकारी निम्बाहेड़ा, बनेड़ा होते हुए जब शाहपुरा आये, तब यहां की जनता द्वारा इनका उत्साहपूर्वक स्वागत किया गया। किन्तु इनका पीछा करने वाले अंग्रेज शावर्स के लिये शाहपुरा के दरवाजे बन्द कर दिये गये।

देवली

शाहपुरा से क्रांतिकारियों ने देवली जाकर आग लगा दी और वहां भी क्रांति की ज्वाला–फैल गई। क्रांति का भय तो पहले से ही था, अतः अंग्रेज वहां से चले गये थे। अंग्रेज अधिकारियों ने देवली के समीप भीलवाड़ा जिले के जहाजपुर में शरण ली। फिर भी देवली एवं निकटवर्ती स्थानों की स्थिति काफी नाजुक थी।

आउवा

विद्रोह का सर्वप्रमुख केन्द्र मारवाड़ में आउवा रहा। अगस्त में एरिनपुरा स्थिति जोधपुर की सेनाओं ने विद्रोह कर दिया। विप्लवकारियों ने कई अंग्रेजों को बंदी बना लिया। ऐसे समय में आउवा के ठाकुर खुशालसिंह ने विप्लवकारियों का साथ देना शुरू किया। इसका मुख्य कारण यह माना जाता है कि पिछले कुछ वर्षो में ठाकुर खुशाल सिंह व जोधपुर के महाराजा के संबंध तनावपूर्ण थे और वर्तमान परिस्थितियों में खुशालसिंह ने अवसर से लाभ उठाना चाहा, परन्तु समाकालीन पत्रों व परिस्थितियों को देखें तो डॉ. के.एस. सक्सेना का उपर्युक्त मत उपयुक्त नजर नहीं आता है। वास्तव में, आउवा में जो विद्रोह हुआ वह एक जन–जागृति का प्रतीत है। खुशालसिंह ने आउवा से चले जाने के उपरांत भी यह विद्रोह होता रहा। इतना ही नहीं अनेक सामंतों ने भी अपनी पूर्ण सहानुभूति आउवा की विद्रोही जनता व सामन्तों के साथ रखी। ज्वालासहाय ने तो लिखा है कि जोधपुर व बीकानेर में इतनी अधिक ब्रिटिश विरोधी भावना थी की अनेक ब्रिटिश प्रांत के लुटेरों को भी अपने यहाँ शरण देने हेतु शासकों को बाध्य होना पड़ा। जोधपुर लीजियन के सैनिकों ने शहर में घूम घूम कर अंग्रेजों के विरूद्ध विद्रोह करने के लिये जनता को प्रोत्साहित किया। इसलिए आउवा का विद्रोह ब्रिटिश विरोधी भावना के कारण था न कि केवल मात्र एरिनपुरा के विद्रोहियों के कारण से आउवा के अतिरिक्त भी कई सामन्तों ने इनका साथ दिया। आउवा के विरूद्ध अंग्रेज सेनायें गई अवश्य थीं किन्तु पहली बार भेजी गई सेना को करारी हार का सामना करना पड़ा। विप्लवकारियों ने एजेन्ट मॉकमसन का सिर धड़ से अलग कर आउवा के किले पर लटका दिया जो एक प्रकार से उनकी विजय का प्रतीक था। परंतु निरंतर अंग्रेज सेनाओं का सामना विप्लवकारी नहीं कर सके व जनवरी 1858 ईस्वीं में आउवा पर ब्रिटिश सैनिकों का अधिकार हो गया। इस सैनिक कार्यवाही के दौरान अनेक निहत्थे नागरिकों की हत्या की गई। यहाँ तो विद्रोह समाप्त हो गया परंतु कोटा की ओर जन–विरोध जोरों से फूट पड़ा।

कोटा

कोटा में भी जन–विद्रोह तेजी से फैल रहा था। इस विरोध ने उग्र रूप उस समय ले लिया जब मेजर बर्टन नीमच से कोटा पहुँचा। इसके पहुँचने के दिन ही दिल्ली का पतन हुआ था। जनता में अंग्रेजों के विरूद्ध तीव्र आक्रोष था। जनरल लॉरेन्स की रिपोर्ट के अनुसार

यह विरोध इतना फैला कि बर्टन व उसके दो पुत्रों को जनता ने मौत के घाट उतार दिया। कोटा महाराव की स्थिति इतनी दयनीय हो गई कि वह अपने परिवार को उदयपुर भेजने की सोचने लग गया था। समस्त शहर व महल पर विद्रोहियों का अधिकार हो गया था। करौली से प्राप्त सैनिक सहायता से ही विद्रोहियों को महल से हटाया जा सका तथा बाद में अंग्रेज सैनिकों की सहायता से इस विद्रोह को समाप्त किया जा सका।

एरिनपुरा

1835 ईस्वी में अंग्रेज सरकार एवं जोधपुर राज्य के मध्य एक समझौता हुआ जिसके अनुसार जोधपुर राज्य ने सैनिक सहायता के बदले अंग्रेज सरकार को वार्षिक राषि देना स्वीकार किया। अतः अंग्रेज सरकार ने इस राषि से 1836 ईस्वी में जोधपुर लीजियन नामक एक सेना तैयार की जो एरिनपुरा में रहा करती थी। अगस्त 1857 में एरिनपुरा की यह सैनिक टुकड़ी आबू गई हुई थी तभी नसीराबाद–विद्रोह की सूचना इस सेना के सैनिकों को मिली और अगस्त 21 को विद्रोह कर दिया। आबू स्थित अंग्रेज अधिकारियों पर आक्रमण किये किन्तु इसमें उन्हें कोई विषेष सफलता अर्जित नहीं हुई। अतएव इस सेना ने एरिनपुरा पहुँचकर जोधपुर लीजियन के अन्य सैनिकों को भी अपने साथ कर लिया और एरिनपुरा स्टेषन को लूटा। इसके बाद मारवाड़ होते हुए दिल्ली की ओर कूच कर रहे थे, तब पाली के पास आउवा ठाकुर खुशालसिंह इन सैनिकों से मिला और इन्हें अपने साथ आउवा ले गया।

सलूम्बर

सलूम्बर में रावत केसरीसिंह के वंशानुगत विषेषाधिकार को समाप्त कर दिया गया था, इसीलिए वह अंग्रेज सरकार एवं महाराणा के विरूद्ध था। अतः जब विद्रोह प्रस्फुटित हुआ तब रावत केसरीसिंह ने महाराणा से अपने परम्परागत अधिकारों की मांग की। महाराणा ने इसकी सूचना शावर्स को नीमच भेज दी। खेरवाड़ा की मेवाड़ भील कोर के अधिकारी कर्नल ब्रुक ने भी शावर्स को सूचित किया कि सलूम्बर रावत खेरवाड़ा की छावनी पर आक्रमण करने हेतु अन्य सामन्त सरदारों को उकसा रहा है। शावर्स ने रावत केसरीसिंह को धमकी भरा पत्र भी लिखा किंतु सलूम्बर रावत ने कूटनीति से काम लेते हुए कहा कि आपको जो सूचना मिली वह गलत है। उधर आउवा के ठाकुर खुशालसिंह ने भी सलूम्बर रावत के पास जाना निष्चित किया। सलूम्बर रावत ने उसे अपने यहाँ रखा भी था किन्तु अंग्रेज अधिकारियों द्वारा अत्यधिक तंग किये जाने पर वह कोठारिया चला गया।

कोठारिया

कोठारिया के रावत जोधसिंह ने भी क्रांतिकारियों का सहयोग किया था। उसने सलूम्बर से आये आउवा के ठाकुर खुशालसिंह को अपने यहाँ शरण दी। तब 8 जून 1858 ईस्वी को अंग्रेज सेना अपने साथ जोधपुर महाराज की सेना लेकर कोठारिया आ गई और आउवा के ठाकुर को ढँढा गया, किन्तु उसका कोई पता नहीं लगा। उधर विद्रोही सैनिकों का एक रसालदार बनेड़ा पहुंचा किन्तु अंग्रेज अधिकारियों द्वारा उसका पीछा कराया जा रहा था तो वह रसालदार कोठारिया के पास आ गया। रावत जोधसिंह ने उसे बंदी बनाकर सौंपने को कहा गया किन्तु वह टस से मस नहीं हुआ और उस विद्रोही रसालदार को कोठारिया से अन्यत्र सुरक्षित रूप से भेज दिया। इतना ही नहीं कोठारिया रावत ने गंगापुर में नियुक्त अंग्रेज अधिकारियों की सम्पत्ति लूटने वाले भीमजी चारण को भी अपने यहाँ प्रश्रय दिया था। रावत जोधसिंह को कई बार विद्रोही को पुनः सौंपने के लिए कहा गया किन्तु उसने अंग्रेज सरकार के आदेशों या पत्रों की कभी कोई परवाह नहीं की।

अन्य स्थानों पर क्रांति

उपर्युक्त स्थानों के अलावा भी राजस्थान में कई ऐसे स्थल थे जहां से क्रांति का शंखनाद हो रहा था अथवा क्रांतिकारियों को शरण देकर इस पूर्णाहुति में अपना सहयोग कर रहे थे। बनेड़ा में विद्रोही सैनिकों का एक रसालदार पहुँचा तो उसे वहां शरण दी गई थी। भरतपुर के सैनिकों ने भी अंग्रेज अधिकारियों के विरूद्ध शस्त्र उठा लिये थे मालसेन के अनुसार, ''अंग्रेज अधिकारियों की सभी अनुनय–विनय व्यर्थ हो गई और विवश होकर अंग्रेज अधिकारियों ने उनके समक्ष समर्पण कर दिया। क्रांतिकारियों की जयघोष से वहाँ का वातावरण गँज उठा। सैनिक षिविरों और बंगलों में आग लगा दी गई।'' अलवर की सेना वहाँ के राज्य कर्मचारी एवं प्रशासनिक अधिकारियों की सहानुभूति पूर्णतया क्रांतिकारियों के साथ थी। सामोद का रावल षिवसिंह जो जयपुर में दीवान था वह नवाब विलायत खां, मियां उस्मान खां तथा साइल्लाखां आदि जयपुर में क्रान्ति के पक्षधर लोग थे। धौलपुर का महाराज भगतसिंह तो अंग्रजों का समर्थक था किन्तु धौलपुर की सेना एवं कर्मचारियों की सहानुभूति क्रांति एवं क्रांतिकारियों के साथ थी। मेवाड़ के सामंतों ने विद्रोहियों को जब भी वे उनकी जागीर से गुजरे, उन्हें सहायता दी। मध्य भारत का विद्रोही नेता नानासाहब मेवाड़ की ओर आया तब सलूम्बर, भीण्डर, बदनौर आसीन्द के सामन्तों ने उसकी सहायता की। गूलर के ठाकुर बिषनसिंह, आलणियावास के ठाकुर अजीतसिंह और आसोप के ठाकुर षिवनाथ सिंह ने भी विद्रोहियों का साथ दिया था। इस प्रकार से सन् 1857 की क्रांति का राजस्थान के कई गाँवों तक प्रसार हो गया था।

तांत्या टोपे का राजस्थान में आगमन

तांत्या टोपे का राजस्थान में आगमन 1857 ईस्वी के विद्रोह में काफी महत्वपूर्ण है। नाथूराम खड़गावत के शब्दों में, ''उसके अभियान ने राजस्थान में एक नई उत्तेजना पैदा की। स्थानीय शासकों से लेकर साधारण जनता तक इससे प्रभावित हुई।'' ग्वालियर में असफलता के बाद तांत्या टोपे राजस्थान की ओर मुड़ा। उसे यह आशा थी कि जयपुर व हाड़ौती से सहायता मिलेगी परंतु जयपुर से सहायता मिलने की आशा न होने से वह लालसोट की तरफ आया। कर्नल होम्स उसका बराबर पीछा कर रहा था। ऐसी अवस्था में तांत्या टोंक की ओर मुड़ा, वहां विषेष सफलता नहीं मिली इसलिए वह उदयपुर और सलूम्बर की ओर सहायतार्थ आया। सलूम्बर का राव विप्लवकारियों के प्रति पूरी सहानुभूति रख रहा था। उसने तांत्या को सैनिक सहायता भी दी, फिर भी पीछा करती हुई अंग्रेज सेना का वह अधिक सामना नहीं कर सका। सर्वाधिक महत्वपूर्ण मुठभेड़ में जो बनास नदी के किनारे

हुई थी उसमें तांत्या को करारी हार का सामना करना पड़ा। मुंषी ज्वालासहाय के अनुसार,''राजस्थान में सब ओर से निराष होकर तांत्या महाराष्ट्र की ओर जाने की सोच रहा था परंतु वर्षा ऋतु के कारण वह चम्बल नदी को पार नहीं कर सका। तब वह बँदी–कोटा की ओर आया। निरन्तर पराजय के पश्चात ही तांत्या झालावाड़ को अपने अधिकार में करने में सफल हुआ। स्थानीय जनता से भी उसको काफी सहायता मिली। जोधपुर के सामन्तों ने भी उसे सहायता दी। ऐसा प्रतीत होता है ंकि वह एक योजनाबद्ध तरीके से चल रहा था, परंतु इस बीच ही सितम्बर 5 को हमिल्टन की सेना से तथा सितम्बर 15 को माइकल की सेना से इसकी हार हुई। अतः निराषाजनक स्थिति में उसने राजस्थान में प्रवेष किया। दिसम्बर 12 को यहाँ उसने अपना अधिकार कर लिया था, किन्तु वह स्थाई नहीं रह सका था। इसलिए वह सलूम्बर की ओर आया, जहां उसे सब प्रकार की सहायता दी गई। फिर भी निरन्तर ब्रिटिश सैनिकों से पीछा किये जाने के कारण उसे राजस्थान छोड़ना पड़ा। एक बार वह दौसा व सीकर की तरफ आया। यहाँ अंग्रेज सेनाओं से उसका मुकाबला हुआ। इस पराजय के पश्चात् तांत्या जंगल की ओर भाग गया परंतु नरवर के राजपूत जागीरदार मानसिंह द्वारा उसके साथ विश्वासघात किया गया और उसे ब्रिटिश सैनिकों के हवाले कर दिया गया। अंत में 18 अप्रेल 1859 ईस्वी में उसे फांसी दे दी गई। तांत्या टोपे का समर्थन करने के कारण सीकर के शासक को भी बंदी बनाकर 1862 ईस्वी में उसको मौत की सजा दे दी गई थी। तांत्या टोपे की इस असफलता से राजस्थान में विप्लवकारियों मे निराषा उत्पन्न हुई। भरतपुर तथा अन्य स्थानों में अंग्रेज–विरोध चल रहा था वह भी समाप्त हो गया। इस प्रकार 1857 ईस्वी का महान् विद्रोह राजस्थान में समाप्त हो गया।

1857 ईस्वी की क्रांति की असफलता के कारण

क्रांति की असफलता का मुख्य उत्तरदायित्व यहाँ के शासकों का है। इसमें कोई संदेह नहीं कि समस्त राजस्थान में अंग्रेजों के प्रति विद्रोह की भावना रही। उनके प्रभाव को समाप्त करने की समाज के प्रत्येक वर्ग की इच्छा थी। निःसंदेह वे वर्षो से एक उपर्युक्त अवसर की प्रतीक्षा में थे परन्तु दुर्भाग्य इस बात का है कि जब यह अवसर मिला तब यहाँ पर उदासीनता बनी रही। शासकों के पास ही समस्त सैनिक शक्ति केन्द्रित थी। उनको यह भय था कि राजनैतिक अव्यवस्था में उनके सामन्त उन्हीं के विरूद्ध न हो जायें। अपने हित को ध्यान में रखते हुए यहाँ के अधिकांश शासकों ने केन्द्रीय शक्ति के प्रति पूर्ण भक्ति रखी। इसी प्रकार से जो सामन्त ब्रिटिश–विरोधी थे उनका भी उद्देष्य अपने सीमित स्वार्थों की रक्षा करना था। उनमें कोई सिद्धान्त का आधार नहीं था। सामन्तों का बहुत बड़ा भाग ब्रिटिश विरोधी होते हुए भी संगठित रूप से अंग्रेजों के विरूद्ध अभियान न कर सका। जनता में भी अंग्रेजों के प्रति असंतोश था। विभिन्न स्थानों पर विद्रोहियों को उन्होंने पूरा समर्थन दिया। एक लम्बे समय से सामन्तशाही पद्धति में जो जीवन–यापन कर रहे थे व इसीलिये नेतृत्व हेतु अपने शासकों की ओर देख रहे थे, परंतु शासकों का इरादा दूसरा ही था। यहाँ की जनता की सहानुभूति बहादुरशाह के प्रति थी। सभी विद्रोहियों से उनका स्नेह था। अंग्रेजों से उनको घृणा थी परंतु अभाव था तो केवल मात्र नेतृत्व का और नेतृत्व केवल मात्र यहाँ के विभिन्न शासक ही दे सकते थे। परंतु न तो उन्हें स्वतंत्रता का प्रेम था और न ही उनमें इतनी क्षमता व योग्यता थी। अधिकांश शासक अपनी प्रशासनिक व्यवस्थाओं के प्रति उदासीन थे। इसलिये इस सारे असंतोश को उचित नेतृत्व के अभाव में सुव्यवस्थित रूप से प्रकट होने का अवसर नहीं मिला। साथ ही आश्चर्यजनक तथ्य यह भी है कि दिल्ली के निकट होते हुए भी प्रमुख नेता का ध्यान राजस्थान की ओर नहीं गया। यह भी स्पष्ट है कि प्रमुख विप्लवकारियों ने यहाँ की जनता में व्याप्त असंतोश को पूर्ण रूप से आंका नहीं। बर्टन का वध, शावर्स का अपमान, टोंक–शाहपुरा आदि स्थानों पर अंग्रेज सैनिकों के लिए द्वार बंद, राजस्थान की सभी सैनिक छावनियों में विद्रोह, यह सब व्यापक रूप से हुआ फिर भी सर्वमान्य नेता के अभाव में इसका कुछ भी प्रतिफल नहीं निकला। इस अभाव का सर्वाधिक उत्तरदायित्व यहाँ के शासकों को है जैसे–जयपुर का शासक तब सवाई रामसिंह था, वह अंग्रेजों को हरसम्भव सहायता देने को इच्छुक था तो उसका दीवान व उसकी सेनायें ब्रिटिश विरोधी थी। डॉ. के. एस. सक्सेना के अनुसार इस बात के यथेष्ट प्रमाण मिलते हैं कि 1857 ईस्वी के विप्लव के समय जयपुर की सेनाओं ने ब्रिटिश सेनाओं को सहायता नहीं दी व उनके विरूद्ध अनेक कठिनाईयाँ उत्पन्न करने में सहयोग दिया। उनके उच्च पदाधिकारी ब्रिटिश विरोधी भावना रखते थे। इतना सब होते हुए भी रामसिंह की अंग्रेजों के प्रति पूर्ण भक्ति के कारण अनेक पदाधिकारियों को बंदी बना लिया गया था। सैनिकों को अंग्रेजों के प्रति भक्ति रखने हेतु यहाँ के शासक ने निरंतर प्रेरित किया।

अलवर की स्थिति भी जयपुर की भांति ही थी। अलवर में भी शासक व शेष वर्ग अलग–अलग वर्गों में बंटे हुये थे। यहाँ पर दो प्रकार की शक्तियाँ काम कर रही थी। एक ओर ब्रिटिश समर्थक सेनाओं का नेतृत्व अलवर महाराजा कर रहा था तो दूसरी ओर ब्रिटिश विरोधी सैनिकों का साथ अलवर प्रशासनिक अधिकारी व सेनायें दे रही थी। यही स्थिति बीकानेर में थी। संभवतः सभी देशी राजा अंग्रेजों को हर संभव सहायता देने में सबसे आगे थे।

धौलपुर, करौली के शासकों ने भी अंग्रेजों के प्रति अपनी पूरी भक्ति भावना रखी परंतु अंग्रेजों को सर्वाधिक महत्वपूर्ण सहयोग मेवाड़ के महाराणा स्वरूप सिंह से मिला। राजस्थान के अधिकांश शासकों का ध्यान मेवाड़ की ओर था। अपनी नीति निर्धारित करने के पहले वह मेवाड़ के रूख के बारे में जानने को उत्सुक थे। विद्रोह के प्रारम्भ होने के साथ ही अनेक पत्र महाराणा को लिखे गये जिससे स्पष्ट होता है कि राजस्थान के शासक एकसी नीति अपनाने के लिए विचार–विमर्ष कर रहे थे। परंतु मेवाड़ के महाराणा स्वरूपसिंह का प्रारंभ से ही रूख अंग्रेजों के पक्ष में था। विद्रोह के शुरू होने के साथ ही अपनी सारी सैनिक शक्ति अंग्रेजों की सहायता के लिये रख दी। इसीलिए जब मेवाड़ के आस–पास विद्रोहियों के

केन्द्र बने हुये थे तब यहाँ की जनता में भी अप्रत्याषित रूप से अंग्रेज विरोधी भावना थी किन्तु महाराणा के समर्थन से यह भावना सुप्तावस्था में बनी रही। नीमच के सैनिक विद्रोह को दबाने, निम्बाहेड़ा को पुनः अंग्रेजों के अधिकार में लाने का यथेष्ट योगदान रहा। निम्बाहेड़ा पर पुनः अंग्रेजों के लिए एक महत्वपूर्ण घटना थी। इस घटना ने अंग्रेज सेनाओं के मनोबल को ऊँचा उठाने में बहुत सहायता की तथा ब्रिटिश प्रतिष्ठा को जो नीमच व आउवा में धक्का लगा उसको पूरा किया। इस प्रकार मेवाड़ व राजस्थान में अन्य शासकों के ब्रिटिश समर्थकों के कारण राजस्थान में 1857 की क्रांति सफल न हो सकी।

परिणाम

इस असफलता के बाद अन्य स्थानों के समान ही अंग्रेजों ने आम जनता के प्रति नृषंसतापूर्ण व्यवहार किया। सूर्यमल्ल मिश्रण ने 'वीर सतसई' मे कोटा में जो अंग्रेजों का व्यवहार था उसका वर्णन करते हुए लिखा है कि बहुत से व्यक्तियों को फांसी दी, बहुतों को गोली मारी, बहुत–सी स्त्रियों की इज्जत खराब की तथा काफी रूपया लेकर महाराव को कोटा वापस दे दिया गया। कोटा में जैसा उनका अमानुषिक व्यवहार था वैसा ही राजस्थान के अन्य भागों में भी बना रहा। अतः 1857 के विद्रोह ने अंग्रेज सेना की नृषंसता की दुःखद स्मृतियाँ ही परिणाम में दी। अब यहाँ पर अंग्रेजी प्रभाव और अधिक तेजी से बढ़ने लगा। राज्यों की दृष्टि से एक महत्वपूर्ण परिवर्तन केवल मात्र यह हुआ कि कम्पनी की अपेक्षा इन राज्यों का सीधा संबंध अब ब्रिटिश ताज से हो गया।

सन् 1857 की क्रांति में विभिन्न वर्गो की भूमिका

1857 की क्रांति राजस्थान में भी जगह–जगह प्रस्फुटित होती रही। यह किसी एक वर्ग विषेष का प्रतिफल नहीं था बल्कि सभी वर्गों के असंतोश का मिला–जुला परिणाम था।

शासक–वर्ग की भूमिका

निःसंदेह अधिकांश राजस्थानी नरेषों ने क्रांति के समय अंग्रेजों का साथ दिया था किन्तु ए.जी.जी. लारेन्स का संदेह था कि शासकों की भूमिका उनके विरूद्ध न रहे। अतः उसने सभी को अंग्रेज–सरकार के वफादार रहने और क्रांतिकारियों का साथ न देने के संदर्भ में पत्र लिखे थे। रियासतों के नरेषों ने भी अपने जागीरदारों को वफादार रहते हुये पूर्ण सहयोग प्रदान करने के पत्र लिख दिये थे। इतने पर भी विद्रोह काल में यह शासक कितनी सख्ती कर सके थे। जोधपुर का महाराज तख्तसिंह तो पूर्णतया अंग्रेज भक्त शासक था किन्तु परिस्थितियों के कारण उसे यह स्वीकारना पड़ा कि उसकी स्थिति असुरक्षित है। कोटा महाराव एवं टोंक के नवाब को तो अंततः अंग्रेज अधिकारियों को यह सलाह देनी पड़ी थी कि वे उनके राज्यों में नहीं आवे। यह उन शासकों की मजबूरी थी फिर भी अंतः स्थल में कहीं तो ब्रिटिश विरोधी भावना सुप्त अवस्था में थी। जिसे वे इस भांति प्रकट कर रहे थे। धोलपुर के शासक को भी अंततः विद्रोहियों की मांगे स्वीकार करनी पड़ी। अतः शासक वर्ग की भूमिका सुस्पष्ट खुलकर अंग्रेजों के विरूद्ध नहीं रही फिर भी अप्रत्यक्ष रूप से उनकी भूमिका के कहीं–कहीं दर्षन अवश्य हो जाते है।

सामंत वर्ग की भूमिका

इस विद्रोह काल में सामंतों की काफी महत्वपूर्ण भूमिका रही थी। यह अलग बात है कि शासकों एवं सामंतो के पारस्परिक तनावपूर्ण संबंधों के कारण सामंत वर्ग अंग्रेज विरोधी नीति अपनाते हुए विद्रोहियों का साथ देने लगा। मेलीसन का यह कथन उपयुक्त नहीं लगता है कि ''राजपूताने के जागीरदारों का झगड़ा उनके शासकों से था ब्रिटिश सरकार से नहीं।'' सामंत वर्ग यदि अंग्रेजों के विरूद्ध न होता तो आउवा का खुशालसिंह दिल्ली की ओर क्यो गया? उसे तो जोधपुर की ओर जाना चाहिये था। सामंत वर्ग ने अपने स्वार्थों के वषीभूत क्रांतिकारियों का साथ दिया हो, किन्तु इससे राजस्थान में अंग्रेजों के विरूद्ध जनसामान्य में मनोवैज्ञानिक वातावरण तो तैयार हुआ।

सैनिकों की भूमिका

अधिकांषतः इस क्रांति को सैनिक विप्लव भी कहा जाता है। परंतु यह भी निर्विवाद है कि सैनिकों की भूमिका भी कम नहीं रही थी। नसीराबाद और नीमच में यह विद्रोह सैनिक विद्रोह के रूप में प्रस्फुटित हुआ। इतना ही नहीं शासकों ने विद्रोहियों के विरूद्ध अपनी सेनायें भेजी तो भी उन्होंने अधिकांषतः निष्क्रियता ही जाहिर की। अतः इस बात से इन्कार भी नहीं किया जा सकता है कि इस क्रांति के समय सैनिकों की भूमिका अंग्रेज–विरोधी थी।

साहित्यकारों की भूमिका

क्रांति के समय कवियों एवं साहित्यकारों की महत्वपूर्ण भूमिका को कदापि भुलाया नहीं जा सकता है। समाज के सभी वर्गो में अपनी कविताओं, लेखों अथवा पत्रों के माध्यम से जाग्रति लाकर नूतन संचार किया। मारवाड़ के सुप्रसिद्ध कविराज बांकीदास ने तो अपनी कविताओं में तत्कालीन शासकों की अंग्रेज–दासता की वृत्ति को धिक्कारा तथा कोसा था। साथ ही जनसाधारण में चेतन्यता की फँक भरते हुए फिरंगियों के विरूद्ध शस्त्र उठाने का आहवान किया। इसी भांति वंशभास्कर एवं वीर सतसई जैसे ग्रन्थों के प्रणेता बँदी के महाकवि सूर्यमल मिश्रण ने कई जागीरदारों को जोष से भरे पत्र लिखे। चारणों–भाटों ने आउवा ठाकुर की प्रशंसा में गीत उसकी अंग्रेज विरोधी भावनाओं के कारण लिखे थे। डँगरपुर में दलजी कवि ने व्यंग कविताओं से शासक–सामन्तों एवं जनता में ब्रिटिश विरोधी भावनाओं का संचार किया था। इतना ही नहीं कवियों ने डँगजी जवारजी जैसे की प्रशंसा में भी गीतों की रचना की। जिसे जनसामान्य बड़ी रूचि से गाता था। इस भांति राजस्थान में साहित्यकार जन कवियों की जोषीली प्रेरणास्पद कविताओं ने अंग्रेज विरोधी वातावरण तैयार करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी।

जनसामान्य की भूमिका

नाथूराम खड़गावत की यह मान्यता उचित ही लगती है कि क्रांति में जनसामान्य ने भी प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से भाग लिया था। क्रांति प्रारंभ हो जाने के बाद मेवाड़ का पॉलिटिकल एजेन्ट जब उदयपुर महाराणा से मिलने के लिए महलों की ओर गया तब रास्तें मे खड़ी जनता से उसे काफी धिक्कारा। कप्तान हार्ड केसल की भी यही दशा हुई। वह भी ससैन्य जिधर से होकर निकला

वहीं लोगों ने उसे उपहासास्पद दृष्टि से देखते हुए गालियों की बौछारें की। परंतु क्रांतिकारी जिधर भी गये उनकों स्वागत सत्कार एवं सहयोग मिला था। क्रांतिकारी जब गागरोन गये तो वहां के मेवाती उनके साथ हो गये थे। इन पर अंग्रेजों द्वारा नृषंस अत्याचार किये गये तो काफी क्रांतिकारी बचकर भवरगढ़ आ गये तब वहां के निवासीयों ने उनको हरसंभव सहयोग प्रदान किया। पॉलिटिकल ऐजेंट विद्रोहीयों का पीछा करता हुआ भवरगढ़ पहुंचा तो वहां के निवासीयों ने उसका कोई सम्मान नहीं किया। उसे जब ज्ञात हुआ कि भवरगढ़ के दुकानदारों ने विद्रोहीयों की बड़ी सहायता की है तब उसने प्रत्येक दुकानदार पर 51 रू. जुर्माना किया किंतु कोई भी दुकानदार यह जुर्माना देने को तैयार नहीं हुआ और वे गाँव छोड़कर जाने लगे इससे विवश होकर यह जुर्माना रद्द करना पड़ा। अलवर के गाँवों की गुर्जर जनता तथा भरतपुर की जाट, गुर्जर और मेवाती जनता ने इस क्रांति में खुलकर अंग्रेज विरोधी भावना का प्रदर्षन किया था। जनता की अंग्रेज विरोधी भावना से जोधपुर महाराजा तख्त सिंह भलीभांति परिचित था। अतः उसने कम्पनी को गुप्त रूप से सहयोग प्रदान किया था। जब कप्तान मेषन मारा गया तो किले पर उसने सम्मान में नौबत बजाना बंद नहीं किया था। कप्तान मेसन के शव को वृक्ष की टहनी पर लटका दिया गया था। किंतु ऐसा अभद्र व्यवहार किलेदार अनाड़सिंह के शव के साथ नहीं किया गया।'' कोटा–महाराव तो अपनी जनता की भावना से सुपरिचित था। तभी तो उसने मेजर बर्टन को कोटा में न आने की सलाह दी थी। इतना ही नहीं तत्कालीन चोर–डाकुओं की भावना में बदलाव आ गया था। जिससे डँगजी–जवाहरजी ने अंग्रेजी छावनी को लूटा और अंग्रेजी क्षेत्रों मे डाके डाले थे। इन्होंने इस धन को लूट कर क्रांतिकारियों में बांट कर देश की स्वतंत्रता के विद्रोह को आगे बढ़ाने में सहयोग किया था। तत्कालीन कवियों ने इनकी प्रशंसा में भी गीतों की रचना कर उनके कार्यो को सराहते हुए जनता को और अधिक प्रेरित किया था। अतः नाथूराम खड़गावत के शब्दों में,''यदि कुछ स्थानों में भाग लिया था तो अन्य स्थानों पर नैतिक समर्थन प्राप्त था, स्पष्ट है कि जनता एवं जनभावनाएं अंग्रेज विरोधी थी।

इस प्रकार से सन् 1857 की क्रांति में जनसाधारण की महत्वपूर्ण भूमिका रही थी फिर भी अन्यों की भूमिका को एकाएक नकारा नहीं जा सकता है। ऐसी स्थिति में यह क्रांति एक मिला–जुला स्वरूप थी।

निष्कर्ष

सन् 1857 के विद्रोह में राजस्थान में जनसाधारणा तथा जागीरदारों ने ब्रिटिश सत्ता को समाप्त करने के लिए विद्रोह किया। राजस्थान राज्यों में कोटा और जयपुर के शासकों ने ब्रिटिश सत्ता की दिल्ली में पुनः स्थापना (सितम्बर 1857) तक विरोधियों का साथ दिया। अन्य राज्यों के शासकों को ब्रिटिश सरकार के प्रति सामान्य स्वामिभक्ति दिखाते हुए विद्रोह के समय अपने राज्यों में शांति बनाये रखने का प्रयास किया और ब्रिटिश सरकार को सीमित सैनिक सहायता प्रदान की जिससे राजस्थान में उनकी सत्ता बनी रह सके।

यद्यपि सभी राजस्थान राज्यों के शासकों की सहानूभूति मुगल बादशाह और विद्रोहियों के साथ थी, लेकिन मेवाड़, मारवाड़, जयपुर, बांसवाड़ा और टोंक के जागीरदारों ने ब्रिटिश सरकार के तथा अपने शासकों के साथ भी विद्रोह कर राजस्थान के शासकों को ब्रिटिश सत्ता का पक्ष लेने के लिए बाधित कर दिया। ब्रिटिश सरकार की राज्यों की सीमाओं पर सैनिक सतक्रता के कारण राजस्थान के शासक एवं जागीरदार मुगल बादशाह को सैनिक सहायता देने मे असफल रहें। परिणामतः ब्रिटिश सरकार ने दिल्ली में विद्रोह का तीव्र गति से दमन कर राजस्थान राज्यों में पुनः पूर्ण सैनिक और राजनैतिक नियंत्रण स्थापित कर लिया।

इसके साथ ही सितम्बर 1857 में दिल्ली में ब्रिटिश सत्ता की पुनः स्थापना और बहादुरशाह के समर्पण के बाद भी राजस्थान के राज्यों में अवध प्रांत के समान ही विद्रोह की निरन्तरता बनी रही। अंग्रेज अधिकारियों का यह अनुमान गलत सिद्ध हुआ कि दिल्ली पर उनके पुनः अधिकार के पश्चात् यह राष्ट्रीय विद्रोह समाप्त हो जाएगा। यथार्थतः राजस्थान राज्यों में भी यह जन–आक्रोष 30 मार्च, 1858 में कोटा राज्य तथा नाना साहब के सेनापति तांत्या टोपे के 21 जनवरी 1859 को सीकर के युद्ध में हारने के बाद ही समाप्त हुआ। वास्तव में 1857 का विद्रोह राजस्थान में दिल्ली के राष्ट्रीय विद्रोह का विस्तृत रूप था। उसके बाद राजस्थान राज्यों के विभिन्न वर्गों में मुगल बादशाह के निर्देषन और समर्थन में 1857 के विद्रोह में ब्रिटिश सत्ता के विरूद्ध अनेक प्रकार से सहयोग प्रदान किया।

कतिपय इतिहासकारों का मत है कि राजस्थान राज्यों में 1857 का विद्रोह एक सैनिक विद्रोह के रूप में प्रारंभ हुआ था, जागीरदारों ने इसमें सहयोग दिया जबकि शासकों ने दृढ़ता से ब्रिटिश सत्ता के प्रति अपनी स्वामिभक्ति प्रदर्षित की। विषेषतः कोटा, टोंक तथा जयपुर राज्यों में विद्रोही गतिविधियों के परिप्रेक्ष्य में यह दृष्टिकोण सही नहीं है। कोटा राज्य के सैनिकों तथा जनसामान्य नागरिकों ने ब्रिटिश सत्ता का तख्ता पलटने के लिए अपने शासक महाराव रामसिंह का समर्थन प्राप्त कर, मुगल बादशाह बहादुरशाह को विद्रोह में अपरोक्ष रूप से सहयोग दिया। इसी प्रकार टोंक राज्य के बहादुर सिपाहियों तथा वहाबी धर्मावलम्बियों ने अपने नवाब की इच्छा का उल्लंघन करते हुए मुगल बादशाह बहादुरशाह के नेतृत्व में ब्रिटिश सत्ता से युद्ध करने के लिए दिल्ली की ओर प्रस्थान किया। आउवा (मारवाड़), खेतड़ी और उनीयारा (जयपुर राज्य), रोवा(सिरोही) तथा सलुंबर (मेवाड़ राज्य) के जागीरदारों तथा राजस्थान राज्यों के सभी वर्गो से राज्य अधिकारियों, राज्य के सैनिकों, आदिवासियों, कृषकों तथा समान्य जनों ने भी ब्रिटिश सत्ता के विरूद्ध अपने असंतोश को 1857 के विरोध में व्यक्त किया। विरोध के प्रारंभ में कोटा और जयपुर के राजपुत शासकों तथा अन्य वर्गो ने सतही रूप से ब्रिटिश सरकार के प्रति स्वामीभक्ति प्रदर्षित की यद्यपि वास्तविक रूप में उन्होंने विद्रोही सिपाहियों से सहानुभूति प्रदर्षित कर मुगल बादशाह को ही अप्रत्यक्ष सहयोग दिया। वस्तुतः विद्रोह की सफलता को लेकर उनमें एक अन्तर्द्वन्द्व था। परंतु

सितम्बर 1857 में ब्रिटिश प्रभुसत्ता के दिल्ली पर पुनः स्थापित होने के बाद वे विद्रोहियों का साथ छोड़ पूर्णतः ब्रिटिश सत्ता के प्रति समर्पित सहयोग देने लगे। शासकों में इस परिवर्तन का प्रमुख ध्येय अपने पैतृक अधिकारों की रक्षा करना था।

इस आलेख में 1857 के विद्रोह में राजस्थान राज्यों के समाज के विभिन्न वर्गो की भूमिका तथा मुगल बादशाह से उनके वैचारिक आदान–प्रदान के आधार पर यह स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है कि यह विद्रोह ब्रिटिश सत्ता के विरूद्ध भारतीयों का प्रथम स्वतंत्रता संग्राम था।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. *टॉड, कर्नल जेम्स, एनाल्स एण्ड एन्टीक्यूटीज ऑफ राजस्थान, भाग 2, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1920, पृष्ठ 21.*
2. *चन्द्रा, बिपिन, भारत का स्वतंत्रता संघर्ष, पेपरबैक, 1987, पृष्ठ 208.*
3. *सक्सेना, डॉ. के.एस., राजस्थान में राजनैतिक जन–जागरण, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, 2007, पृष्ठ 15.*
4. *पानगड़िया, बी.एल., राजस्थान में स्वतंत्रता संग्राम, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, 2007, पृष्ठ 10.*
5. *जोषी, डॉ. बसन्त, उन्नीसवीं सदी का राजस्थान, जयपुर पब्लिषिंग हाउस, जयपुर, 1997, पृष्ठ 29.*
6. *दिवाकर, बी.एम., राजस्थान का इतिहास, साहित्यागार, जयपुर, 1987, पृष्ठ 304.*
7. *गुप्ता, के.एस., व्यास गोपाल, ओझा, जे.के, मध्योत्तर आधुनिक राजस्थान का इतिहास, षिवा पब्लिषर्स डिस्ट्रीब्यूटर्स, उदयपुर, 2001, पृष्ठ147.*
8. *ओझा, गौरीषंकर हीराचन्द, राजपूताने का इतिहास, राजस्थानी ग्रन्थागार, जोधपुर, 2014, पृष्ठ 25.*
9. *शर्मा, गोपीनाथ, राजस्थान का इतिहास, षिवलाल अग्रवाल एण्ड कम्पनी, इन्दौर, 2017, पृष्ठ 503.*
10. *शर्मा, कालूराम, व्यास, डॉ. प्रकाष, राजस्थान का इतिहास (प्रारम्भ से 1949 तक), पंचषील प्रकाषन, जयपुर, 2005, पृष्ठ 342.*
11. *खड़गावत, नाथूराम, राजस्थान रोल इन द फ्रीडम स्ट्रगल ऑफ 1857, जनरल एडमिनिस्ट्रेषन डिपार्टमेन्ट गवर्नमेंट ऑफ राजस्थान, 1957, पृष्ठ 178..*
12. *श्यामलदास, वीर विनोद, पृष्ठ 1968.*
13. *सहल–वीर सतसई, पृष्ठ 78.*
14. *ज्वाला (साप्ताहिक) जोधपुर, 2 सितम्बर, 1978, पृष्ठ 2.*